।।श्रीः।।

कार्यक्रम के प्रमुख अतिथि आदरणीय डॉ. वी. के. सारस्वत जी अन्य निमंत्रित अतिथि गण, उपस्थित नागरिक सज्जन, माता भगिनी तथा आत्मीय स्वयंसेवक बन्धु :–

श्री विजयादशमी के प्रतिवर्ष संपन्न होनेवाले पर्व के निमित्त आज हम यहाँ एकत्रित हैं। संघ कार्य प्रारम्भ होकर आज 90 वर्ष पूर्ण हुए। यह वर्ष भारतरत्न डॉ. भीमराव रामजी उपाख्य बाबासाहेब आम्बेडकर की जन्मजयंती का 125 वाँ वर्ष है। सम्पूर्ण देश में सामाजिक विषमता की अन्यायी कुरीति को चुनौति देते हुए उन्होंने जीवनभर संघर्ष किया। स्वतंत्र भारत के संविधान में आर्थिक व राजनीतिक दृष्टि से उस विषमता को निर्मूल कर समता के मूल्यों की प्रतिष्ठापना करनेवाले प्रावधान कर वे गये। संघ के द्वितीय सरसंघचालक श्री गुरुजी के शब्दों में आचार्य शंकर की प्रखर बुद्धि व तथागत बुद्ध की असीम करुणा का संगम उनकी प्रतिभा में था।

गत वर्ष संघ के संस्थापक पू. डॉ. हेडगेवार जी की जयंती का भी 125 वाँ वर्ष था। समतायुक्त शोषणमुक्त हिन्दू समाज के सामूहिक उद्यम के आधार पर संपूर्ण विश्व में उदाहरणस्वरूप परमवैभव संपन्न भारत के निर्माण का स्वप्न उन्होंने देखा था। उस लक्ष्य के लिये प्रामाणिकता से, निस्वार्थबुद्धि से व तन–मन–धन पूर्वक सतत् प्रयास करनेवाले कार्यकर्ताओं के निर्माण की पद्धति देकर वे गये। उस कार्यपद्धति के जानकार, संघ के तृतीय सरसंघचालक स्व. बालासाहब देवरस का जन्मशती वर्ष प्रारम्भ हो रहा है। संघ की ही कार्यपद्धति में पले बढ़े तथा भारतीय दर्शनों के सनातन मूल्यों के आधार पर, राष्ट्र की व्यवस्था का संपूर्ण व युगानुकूल वैचारिक दिग्दर्शन करनेवाले 'एकात्म मानव दर्शन' को देनेवाले स्व. पंडित दीनदयाल जी उपाध्याय का जन्मशताब्दि वर्ष भी प्रारम्भ हो चुका है।

सुखद संयोग ऐसा है कि भारत में सुशासन का आदर्श प्रस्थापित कर, दक्षिणपूर्व एशिया महाद्वीप में अपनी सनातन भारतीय संस्कृति की मंगलसूचक पताका फहरानेवाले राजराजेश्वर राजेन्द्र चोल महाराजा के राज्यारोहण का भी 1000 वाँ वर्ष मनाया जा रहा है तथा, जाति, मत, पंथ के भेदों को पूर्णतः नकारकर, रूढ़ियों की बेडियों को तोड़कर भक्ति मार्ग को समाज के सभी घटकों के लिये खुला करते हुए, सामाजिक समरसता के जागरण का पुनः प्रवर्तन करनेवाले श्री रामानुजाचार्य का 1000 वीं जयंति का वर्ष भी अगले वर्ष संपन्न करने की तैयारी समाज में हो रही है। जम्मू–कश्मीर में शैव सिद्धान्त के महान आचार्य अभिनव गुप्त का भी यह 1000 वीं जयंति का वर्ष चल रहा है। "कर्मसु कौशलम्" व "समत्व" के साथ फलाशारहित निरन्तर विहित कर्म करने का संदेश देनेवाली श्रीमद्भगवद्गीता का 5151 वाँ वर्ष गीता जयंती तक चलेगा।

इस वर्ष हमें छोड़ गये समाज के दो श्रद्धेय धुरीण, नई पीढ़ी में आत्मविश्वास व देशगौरव जगाकर उन्हें देश के लिये हर क्षेत्र में उत्कृष्टता प्राप्त करने की प्रेरणा देने में ही जीवन लगा देने वाले पूर्व राष्ट्रपति डॉ. अब्दुल कलाम, व वैदिक शिक्षक बनकर अपने समाज में तथा विश्व में सनातन संस्कृति के विषय में युगानुकूल दृष्टि, गौरव व सक्रियता जगानेवाले स्वामी दयानन्द सरस्वती, इन दोनों का जीवनकार्य व संदेश भी भारत गौरव व सामाजिक एकता ही था।

इन सब संयोगों के स्मरण का कारण यही है कि आज भी हमारे आपके परिवारों से लेकर सम्पूर्ण विश्व की समृद्धि, शांति व उन्नति के लिए हमारा कर्तव्य भी हमें समृद्ध, समर्थ व समरस भारत के निर्माण के लिए आह्वान कर रहा है। संपूर्ण समाज की संगठित शक्ति के आधार पर विजय प्राप्त करने का पथ ही आज का विचारणीय विषय है।

जीवन के सब क्षेत्रों में विजिगीषु नीति के आधार पर स्वावलम्बी, सामर्थ्यसंपन्न, वैभवसंपन्न, पूर्ण सुरक्षित होकर, संपूर्ण विश्व को मंगलप्रद उत्कर्षकारक नेतृत्व देनेवाला भारत खड़ा करना तब सम्भव होगा जब, समतायुक्त, शोषणमुक्त, गौरवसंपन्न, संगठित व प्रबुद्ध समाज का उद्यम उन नीतियों के समर्थन में चलेगा; तथा ऐसे समाज की दृढ़ इच्छाशक्ति प्रजातांत्रिक व्यवस्था में चलनेवाले तंत्र की तथा उसके संवैधानिक चालकों को दिग्दर्शक होगी। सजग, स्पष्ट, अचूक नीतियाँ तथा स्वार्थभेदरहित विवेकी समाज यह दोनों कारक देश के भाग्य–परिवर्तन के लिए अनिवार्य है, इसलिए उनका उभयपक्षतः एक दूसरे से पूरक बनकर चलना आवश्यक है।

इस दृष्टि से जब आज के देश के परिदृश्य का विचार करते हैं तब एक बहुत ही सुखद व आशादायक चित्र सामने आता है। दो वर्ष पूर्व में जो निराशा का, अविश्वास का, वातावरण था वह अब प्रायः लुप्त हो गया है। अपेक्षाओं का तथा अपेक्षापूर्ति के विश्वास का वातावरण निर्माण हुआ है। उस वातावरण का साक्षात् अनुभव देश के अंतिम पंक्ति में खड़े व्यक्ति तक पहुँचे तथा, अपने स्वयं के अनुभव से, अपने व देश के भाग्य परिवर्तन में, समाज के विश्वास की मात्रा निरन्तर बढ़ती रहे, इसका ध्यान रखना होगा।

यह सभी अनुभव कर रहे हैं कि पिछले दो वर्षों में बहुत द्रुतगति से भारत की विश्व में प्रतिष्ठा बढ़ी है। पडोसी देशों से संबंध अपने देश का हित ध्यान में रखते हुए सुधारने के लिए कई महत्त्वपूर्ण कदम उठाये गये हैं तथा वे सफल परिणाम भी दे रहे हैं। लगता है कि विश्व को आधुनिक भारत का एक अलग नया

परिचय मिल रहा है। स्वगौरव तथा आत्मविश्वास से युक्त होकर, संपूर्ण विश्व के प्रति अपना परंपरागत सद्भावनापूर्ण दृष्टिकोण रखते हुए, दृढ़तापूर्वक देशहित की रक्षा के लिए अंतरराष्ट्रीय राजनय में दो टूक अपनी बात कहनेवाला, विश्व के किसी भी देश में निर्माण हुए संकट में अपना मित्रतापूर्ण हाथ बढ़ानेवाला, भारत का नया अनोखा रूप धीरे–धीरे आकार लेता देख, विश्व के देश स्तब्ध, लुब्ध व नई आशा से आशान्वित हैं। भारत की गीता, भारत का योगदर्शन, भारत के तथागत विश्वमान्य हो रहे हैं। भारतीय मानस व परंपरा के श्रद्धा के विषयों पर ध्यान जाना तथा उनकी सुरक्षा व मानरक्षा के लिए नीतिगत पहल भी प्रारम्भ हुई है। तथाकथित महाशक्तियों के अवांच्छनीय प्रभाव जाल से मुक्त होने के लिए छटपटानेवाली विकसनशील दुनिया नेतृत्व के लिए भारत की ओर देख रही है। भारतवर्ष की उन्नत तथा अवनत अवस्था में भी उसने विश्व को अपना कुटुम्ब मानकर अपनी सजगता, दृढ़ता व शक्ति के आधारपर, राष्ट्रहित व विश्वहित, दोनों को प्रामाणिकता से साधने की परंपरा निभायी है। राजनय की उस शैली का थोड़ा–थोड़ा अनुभव पुनः मिलने लगा है। विश्व के सामने व देश के प्रत्येक घटक के अंतःकरण की अनुभूति में, भारत का यह देदीप्यमान स्वरूप पूर्णतः अवतरित हो, यह आवश्यक है। उसके लिए जीवन के सभी अंगों में नये विचार व नये पुरुषार्थ का प्रकटीकरण हमें करना होगा। युगयुग से चलते आये हमारे अक्षुण्ण राष्ट्रजीवन के मूल व सर्वहितकारी सत्य के आधार पर, युगानुकूल नीति, तद्नुकूल व्यवस्थाएँ तथा उनको क्षमतापूर्वक धारणा करनेवाले समाज का नया रूप गढ़ना पड़ेगा।

"साहेब वाक्यं प्रमाणम्" की मानसिक दासता का मन से पूर्ण उच्चाटन करते हुए, भारतीय चित्त व मानस के आधार पर, विश्व से जो अच्छा, उचित व सत्य प्राप्त होता है उसको देशोपयोगी बनाकर, अपने देश के लिये काल सुसंगत पथ का स्वतंत्र विचार तथा तदनुरुप समाज में, विद्वानों व चिन्तकों में, प्रशासकों व प्रशासनों में तथा शासन व नीतियों में विचार व आचरण का परिवर्तन किए बिना, विश्व को उदाहरणस्वरूप, स्वावलम्बी, समतायुक्त, शोषणमुक्त, सामर्थ्यसंपन्न, समृद्ध भारत का निर्माण संभव नहीं। कई शतकों से विश्व का चिन्तन जिस दृष्टि पर आधारित है उस दृष्टि का अधूरापन अब वैज्ञानिक कसौटियों पर भी सिद्ध हो रहा है तथा उस अधूरे चिन्तन के परिणामों के अनुभव भी उस दृष्टि व चिन्तन के ही पुनर्विचार की आवश्यकता अधोरेखित कर रहे हैं।

1951 में संयुक्त राष्ट्र संघ के सामाजिक व आर्थिक कार्यविभाग ने इस अधूरे चिन्तन का संपूर्ण समर्थन करते हुए यह कहा था– There is a sense in which rapid economic progress is impossible without painful adjustments. Ancient philosophies have to be scrapped; old social institutions have to disintegrate. Bonds of caste, creed and race have to burst and large numbers of persons who cannot keep up with the progress have to have their expectations of a comfortable life frustrated. Very few communities are willing to pay the full price of economic progress.

यह आत्यंतिक जड़वादी, अहंकेन्द्रित, मानवीय संवेदनशून्य दृष्टि विश्व पर थोपी गई, उसके सर्वविदित परिणामों के अनुभव जब इसके पुरस्कर्ताओं को भी होने लगे तब उनकी इस भाषा में एकदम "घूम जाव" (उलट) परिवर्तन दिखाई दिया। अक्तूबर 2005 में जी 20 राष्ट्रों के केन्द्रीय अधिकोषों के गवर्नरों का सम्मेलन कहता है :–

We note that development approaches are evolving over time and thus need to be updated as economic challenges unfold. ------ We recognize there is no uniform development approach that fits all the countries. Each country should be able to choose the development approaches and policies that best suit its specific characteristics while benefitting from their accumulated experience in policy making over last decades, including the importance of strong macroeconomic policies for sustained growth.

बाद में 2008 में और अधिक स्पष्टता के साथ इसी बात को दोहराते हुए विश्व बैंक का समाचार बुलेटिन यह कहता है – In our work across the world we have learnt the hard way that there is no one model that fits all. Development is all about transformation. It means taking the best ideas, testing them in new situations and throwing away what doesn't work. It means, above all, having the ability to recognize when we have failed. This is never an easy thing to do. It is ever more difficult for an organization to do so, be it the government or the World Bank, which constantly need to adapt to the changing nature of developmental challenge.

इस स्वानुभूति के बाद विश्व में विकास को लक्षित कर चलने वाले संवादों में ''समग्र'' (Holostic), ''धारणक्षम विकास'' (Sustainable development) आदि वाक् प्रयोगों का सुनाई देना प्रारंभ हुआ है तथा पर्यावरण की भी थोड़ी–थोड़ी चिंता होने लगी है। इसलिए प्रयोग–अनुभव–परिवर्तन के चक्र में से गुजरती हुई इस अधूरी दृष्टि को ध्रुव सत्य मानने के भ्रमजाल से मुक्त होकर, हमें अपनी स्वयं की समयसिद्ध शाश्वत दृष्टि के आधार पर ही चलना उपयुक्त होगा। वह दृष्टि समन्वय व सहयोग पर आधारित है। जीवन को अर्थ–काम

प्रधान नहीं, धर्म व संस्कार प्रधान मानती है। धारणक्षम विकास के लिये कम से कम ऊर्जाव्यय; अधिकतम रोजगार; पर्यावरण; नैतिकता व कृषि के प्रति पूरकता तथा स्वावलम्बन व विकेन्द्रित अर्थतन्त्र का पुरस्कार करनेवाले उद्योग तंत्र को मानती है। कौशल विकास तथा उत्पादन में वृद्धि पर उसका जोर रहता है। देश के सबसे अंतिम व्यक्ति की अभाव, अशिक्षा व अपमान से मुक्ति तथा ऐसे वर्ग का विकास इस अपनी दृष्टि में राष्ट्रीय विकास का आधार व विकास का प्रमाण माना जाता है। इसके लिए कृषि व किसान; लघु, मध्यम व कुटीर उद्योग; छोटे व्यापारी व कारीगर इनका अधिक ध्यान रखना पड़ेगा। आर्थिक, सामाजिक क्षेत्र में काम करनेवाले सभी संगठनों, चिन्तकों कार्यकर्ताओं को, नीतिकारों को, शासन, प्रशासन सभी को यह दिशा ध्यान में रखना आवश्यक है।

आनन्द की बात है कि नीति आयोग के घोषणापत्र में इस दिशा के स्पष्ट संकेत मिल रहे हैं। स्पष्ट है कि यह परिवर्तन एकदम नहीं होगा। विरासत में मिली आर्थिक स्थिति के तल से सामान्य धरातल पर आना, अनेक राजनीतिक संतुलनों को तथा प्रशासकीय अनिवार्यताओं को साधने–पाटने की कसरत कर, देश के सामान्य वर्गों तक विकास का अनुभव पहुँचाना तथा उनका भी सहभाग प्राप्त करते हुए सबके विश्वास की स्थिरता व वृद्धि होती रहे यह देखना, धैर्यपूर्वक परिणामों की प्रतीक्षा करना यह सभी को करना पड़ता है। मुद्रा बैंक, जन–धन योजना, गैस सब्सिडी को छोड़ देने का आवाहन, स्वच्छ भारत अभियान, कौशल विकास, ऐसी कुछ उपयोगी पहल इस दृष्टि से सरकार के द्वारा की गयी हैं। विकासनीतियों के जमीन पर दिखनेवाले परिणामों की यथातथ्य जानकारी मिलना तथा विकास में सभी को सहभागी बनाने की दृष्टि से सार्थक संवाद व क्रियान्वयन की गति को बढ़ाने की आवश्यकता लगती है।

देश के भाग्य परिवर्तन में सब प्रकार की नीतियों की सफलता सम्पूर्ण समाज के उद्यम, सहयोग क्षमता तथा समझदारी पर निर्भर करती है। समाज का प्रबोधन व प्रशिक्षण उसके लिए अनिवार्य शर्त है। आजकल विकास का विचार करते समय देश की जनसंख्या भी एक विचार का विषय बनता है। हमारे देश की जनसंख्या नियंत्रण नीति विचारपूर्वक बनानी पड़ेगी। जनसंख्या बोझ है या साधन है? दोनों प्रकार से विचार कर देखना चाहिए। 50 वर्षों के पश्चात् हमारे देश के संसाधन तथा व्यवस्थाएँ कितने लोगों को पोषण रोजगार व जीवनविषयक अवसर तथा सुविधाएँ दे सकेगें? 50 वर्षों के पश्चात् हमारे देश को सुचारू रूप से चलाने के लिए कितने हाथों की आवश्यकता रहेगी? सन्तान वृद्धि का कष्ट व उनके मन संस्कारित करने का कार्य माताओं को करना पड़ता है। उनका पोषण, स्वास्थ्यरक्षण, मानमर्यादा का संरक्षण, उनका सशक्तिकरण, उनका प्रबोधन, उनके लिए अवसर तथा उसका लाभ ले सकने की स्वतंत्रता इन सबकी कैसी व्यवस्था है वह कैसी होनी पड़ेगी? 50 वर्ष के बाद हमारे देश की पर्यावरण स्थिति की हमारी कल्पना क्या है? पिछले दो जनगणनाओं के आँकड़े प्रसिद्ध होने के पश्चात् जनसंख्या का स्वरूप व उसमें उत्पन्न हुआ असंतुलन आदि की भी पर्याप्त चर्चा हो रही है। देश के वर्तमान तथा भविष्य पर उसके भी परिणाम होते हैं, हो रहे हैं। वोट बैंक की राजनीति से ऊपर उठकर इन सब बातों का समग्र विचार कर संपूर्ण देश की प्रजा के लिए समान जनसंख्या नीति बनने की आवश्यकता है। वह नीति मात्र शासन तथा कानून के बल से लागू नहीं होती। उसके स्वीकार करने के लिए समाज का मन बनाने के प्रयास भी पर्याप्त मात्रा में करने पड़ते हैं। उनका भी विचार नीति बनाते समय ही कर लेना उचित रहेगा।

मनुष्य की सहज प्रवृत्तियाँ, पंथ–संप्रदायों की आचरण परम्पराएँ, समाज में चलती आई सांस्कृतिक परम्पराएँ ये ऐसे विषय हैं जिनमें, यदि देश काल परिस्थिति के अनुसार आवश्यक व उचित हो तो भी, वैसा परिवर्तन केवल कानून के परिवर्तन से, अथवा उसके पीछे खड़े किये शासन के दण्ड के बलमात्र से न कभी हुआ है, न कभी होगा। ऐसे परिवर्तनों के पहले व बाद में भी, समाज प्रबोधन द्वारा मन बनाने का सौहार्दपूर्ण प्रयास शासन, प्रशासन, माध्यम, तथा समाज के धुरीण व सज्जनों को सतत् करना पड़ता है। सस्ती लोकप्रियता अथवा राजनीतिक लाभ लेने के मोह से दूर रहते हुए, सत्य के ही दिग्दर्शन में, समाज के सभी वर्गों के प्रति आत्मीयतापूर्ण भाव रखकर ही, समाज का मन प्रबोधन के द्वारा बदला जा सकता है। हाल ही के दिनों में ऐसे कुछ निर्णय आये जिससे संबंधित वर्गों में जो वेदना के भाव उभरे उनसे बचा जा सकता था। उदाहरण के लिए जैन मतानुयायी वर्ग में संथारा, दिगंबर आचार्यों का विशिष्ट जीवनक्रम, बालदीक्षा आदि पद्धतियाँ पुराने समय से चली आ रही हैं। उन परम्पराओं के कारण, महत्व, तथा उनके पीछे का चिन्तन आदि को, पंथ–सम्प्रदायों के आचार्यों के साथ चर्चा कर गहराई के साथ समझे बिना उनसे छेड़छाड़ का परिणाम समाज के स्वास्थ्य, सौहार्द व अंततो गत्वा देश के लिए घातक होगा। प्रत्येक पंथसम्प्रदाय अपनी मान्यताओं एवं परम्पराओं का समय–समय पर विश्लेषण कर, देश–काल–परिस्थिति के अनुसार उनमें बदल कर, मूल्यों के कालसुसंगत आचरण का रूप खड़ा करता जाता है यह भी हमारे देश की ही परंपरा है। उसके अनुसार परम्पराओं का पुनर्विचार व परिवर्तन भी होना अच्छा है। परन्तु यह कार्य उस समूह के अंदर से ही हर बार किया गया है, बाहर से थोपने का प्रयास केवल विवादों को ही जन्म देता आ रहा है। कोई भी व्यवस्था परिवर्तन समाजमन परिवर्तन के बलपर ही यशस्वी हुआ है।

परिवर्तन के लिए समाज में एक महत्वपूर्ण साधन होता है शिक्षा की व्यवस्था। हाल के वर्षों में वह व्यापार का साधन बनती जा रही है। इसीलिए वह महंगी होकर सर्वसामान्य व्यक्ति की पहुँच के बाहर भी होती जा रही है। स्वाभाविक ही शिक्षा के उद्देश्य पूरे होते हुए समाज में दिखाई नहीं दे रहे हैं। शिक्षा का उद्देश्य विद्यादान के साथ–साथ, विवेक, आत्मभान व आत्मगौरव से परिपूर्ण, संवेदनशील, सक्षम, सुसंस्कृत मनुष्य का निर्माण यह होना चाहिए। इस दृष्टि से समग्रता के साथ शिक्षापद्धति के अनेक प्रयोग विश्व में व देश में भी चल रहे हैं। उन सारे प्रयोगों का ठीक से संज्ञान लेना चाहिए। उनके निष्कर्ष व अबतक शिक्षा के बारे में अनेक तज्ञों, संगठनों तथा आयोगों के द्वारा दिये गये उपयुक्त सुझावों का अध्ययन कर, पाठ्यक्रमों से लेकर शिक्षा संचालन, शुल्क व्यवस्था आदि शिक्षा पद्धति के सब अंगों तक में कुछ मूलभूत परिवर्तन लाने का विचार करना होगा। शिक्षा समाजाधारित होनी चाहिए। शिक्षा की दिशा उसके उद्देश्य व आज के समय की आवश्यकता दोनों की पूर्ति करनेवाली हो, इतनी परिधि में पद्धति की स्वतन्त्रता भी देनी चाहिए। शिक्षा व्यापारीकृत न हो इसलिए शासन को भी सभी स्तरों पर शिक्षा संस्थान अच्छी तरह चलाने चाहिए। सारी प्रक्रिया का प्रारम्भ शिक्षकों के स्तर की तथा उनमें दायित्वबोध की चिन्ता, उनके परिणामकारक प्रशिक्षण तथा मानकीकरण के द्वारा करने से होना पड़ेगा।

परन्तु इन सबके साथ–साथ हम अभिभावकों, यानी समाज का भी दायित्व, इस प्रक्रिया में बहुत महत्व रखता है। क्या हम अपने घर के बालकों को अपने उदाहरण से व संवाद से यह सिखाते हैं कि जीवन में सफलता के साथ, किंबहुना उससे अधिक, महत्त्व सार्थकता का है? क्या हम अपने आचरण से सत्य, न्याय, करुणा, त्याग, संयम, सदाचार आदि का महत्व नई पीढ़ी के मन में उतारने में सफल हो रहे हैं? क्या हमारी पीढ़ी इस प्रकार के व्यवहार का आचरण हमारे सामाजिक व व्यावसायिक क्रियाकलापों में छोटे–मोटे लाभ–हानि की परवाह किये बिना आग्रहपूर्वक व सजगता के साथ कर रही है? हमारे करने, बोलने, लिखने से समाज विशेषकर नई पीढ़ी एकात्मता, समरसता व नैतिकता की ओर बढ़ रही है या नहीं इसका भान हम–समाज का प्रबोधन करनेवाला नेतृवर्ग तथा माध्यम–रख रहे हैं क्या?

राज्यव्यवस्था, अर्थव्यवस्था आदि व्यवस्थाएँ मनुष्यों के आचरण को नियंत्रित करती हैं; "यथा राजा तथा प्रजा"; यह सत्य का एक पहलू है। इसलिए नीतियाँ समाज को जोड़नेवाली, दुर्बलतम घटक की उन्नति की चिन्ता करते हुए समाज के सभी घटकों की उन्नति का समन्वय साधनेवाली होनी ही चाहिए। अपने देश का चुनावतंत्र, प्रशासन, कर व्यवस्था, उद्योग नीति, शिक्षा नीति, कृषिनीति, सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाएँ आदि में अनेक मूलभूत सुधार कर उनको अधिक व्यवस्थित व लोकोपयोगी बनाने की आवश्यकता है, यह बात सही है। पाकिस्तान की शत्रुता बुद्धि; चीन का विस्तारवाद; विश्व में बढ़ती हुई कट्टरता व अहंकार तथा अंतरराष्ट्रीय राजनीति की शतरंज में चली गई कूटनीतिक कुचालों के कारण उत्पन्न हुआ आतंकवादी ISIS का संकट; इन सबके परिणामस्वरुप अपने देश के सामने पहले से खड़ी सीमा सुरक्षा की व अतंर्गत सुरक्षा की समस्या और जटिल व गंभीर बनती जा रही है। बाहरी सत्ता से समर्थित अथवा बाहरी विचार से प्रेरित आतंकवाद के कारण गुमराह होकर उस गलत राह पर अग्रेसर होने वाले कुछ लोग अपने देश में भी मिल जाते है। एक समग्र नीति बनाकर दृढतापूर्वक इन सब समस्याओं का पूर्ण निरसन करना शासन का कर्तव्य है यह बात सभी मानते है। सामाजिक, सांस्कृतिक जीवनमूल्यों का पोषण हो, उसके क्षरण का चला हुआ क्रम बंद हो इसलिये नैतिक शिक्षा का सुयोग्य प्रावधान शिक्षा नीति में लाना, संवाद माध्यमों के द्वारा जाने अनजाने कोई कुप्रभाव निर्माण न हो ऐसा उनकी स्वतंत्रता को कायम रखते हुए नियंत्रण भी शासन के विचार में आना चाहिये ऐसा भी अनेक लोग सोचते है। बनी हुई इन आशा एवं अपेक्षाओं के अनुरूप काम हों, जहाँ हो रहा है वहाँ गति बढ़े यह सोचना ठीक ही है। परन्तु इस सत्य का उतना ही प्रभावकारी दूसरा पहलू है कि दुनिया में व अपने देश में भी समाज की इच्छा, गुणवत्ता तथा संगठित अवस्था के संयोग से व्यवस्था व शासन नियंत्रित होते हैं। अपने स्वत्व की पहचान कर, अपने स्वगौरव के आधार पर, स्वार्थ व भेदों को मन से मिटाकर समाज जब देश के भाग्यपरिवर्तन के लिए खड़ा होकर चलना प्रारम्भ करता है तब व्यवस्थाएँ उसको सहायक होती हैं, परिवर्तन के पथ पर अग्रसर होती हैं तथा परिवर्तन में पूर्ण सहायक होती हैं। शासन, प्रशासन व प्रजा, तीनों के मन में स्वराष्ट्रस्वरूप की पूर्ण स्पष्टता, उसके प्रति गौरवबोध, प्रामाणिक राष्ट्रनिष्ठा, सुसंगठित अवस्था व उनके आधार पर सदिश चिन्तन तथा दीर्घोद्योग की क्षमता होती है तब ही कोई राष्ट्र सुरक्षित, प्रतिष्ठित, सम्पन्न व सुखी बनता है।

हमारे विविधतापूर्ण समाज को संगठित कर सकनेवाला सूत्र कौन सा है? (1) निश्चित ही वह, सब विविधताओं का स्वीकार व सम्मान करनेवाली हमारी सनातन संस्कृति–हिन्दू संस्कृति है। वही सब भारतीयों का स्वभाव, उनकी मूल्यपरंपरा है। (2) उस संस्कृति के आचरण को ही जिन हमारे पूर्वज महापुरुषों ने अपना जीवन बनाया, उसके पोषण संवर्धन के लिए अथक परिश्रम किया, उसकी सुरक्षा प्रतिष्ठा के लिए स्वयं को बलिदान कर दिया, उनका गौरव हमारे लिए आज भी प्रेरणा व आदर्श बना हुआ है। (3) जिस सुजल–सुफल चैतन्यमयी मातृभूमि में हमें उस संस्कृति के आधारभूत सत्य का तथा तद्भूत धर्म का साक्षात्कार हुआ, जिसकी दिव्य समृद्धि व पोषण ने हमें उदारचेता व सत्प्रवृत्त बनाया, उसकी प्रेमभक्ति उन पूर्वजों से ही विरासत में हमें

मिली। वह आज भी देश के प्रत्येक व्यक्ति के पुरुषार्थ जागृति का सामर्थ्य रखती है। इन तीनों सूत्रों से अपनी भाषा, प्रान्त, पंथ, पक्ष आदि की विविधता को सुरक्षित रखकर भी व्यक्ति सहज ही मनःपूर्वक जुड़ता है। अपनी छोटी पहचान सुरक्षित रखकर समाज की विशाल पहचान का अंग बन जाता है। इन तीनों सूत्रों के आधारपर विकसित मानवतापूर्ण पुरुषार्थ, दृष्टि, चिन्तन व तदनुरूप निर्णय, अविरोधी आचरण को ही हम हिन्दुत्व कहते हैं।

ऐसे इस हिन्दुसमाज का जीवन सनातन समय से – "हिन्दू" शब्द के उत्पन्न होने के बहुत पहले से – इसी त्रिसूत्री के आधार पर समयानुकूल रूपों को धारण करते चलता आया है। इस देश के हिताहित का दायित्व केवल और केवल उसका है। इस अपने हिन्दुस्थान देश का भाग्य और भवितव्य, हिंदू समाज के साथ एकरूप है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ गत 90 वर्षों से देश के भाग्यविधाता हिन्दूसमाज को, देश के लिए उद्यम करनेयोग्य बनाने का अविरत प्रयत्न कर रहा है। संघ निर्माता डॉ. हेडगेवार जी ने यह अच्छी तरह समझ लिया था, कि देशहित, राष्ट्रहित, समाजहित के काम किसी को भी ठेके पर नहीं दिए जा सकते। समाज को ही संगठित व योग्य बनकर दीर्घकाल उद्यम करना पड़ता है तब देश वैभवसम्पन्न बनता है। समाज की यह तैयारी करानेवाले कार्यकर्ताओं को गढ़ने का कार्य ही राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ है। संघ की सरल साद्गीपूर्ण कार्यपद्धति से तैयार होकर निकले स्वयंसेवकों का कर्तृत्व आज सबके सामने है, वे आज समाज के स्नेह विश्वास के कृतज्ञ भागी हैं, भारत के लिए जगन्मान्यता भी प्राप्त कर रहे हैं।

आईये, हम सब इस पवित्र कार्य के सहयोगी कार्यकर्ता स्वयंसेवक बनें। क्योंकि दुनिया को आवश्यक प्रतीत होती हुई नई राह देनेवाला भारत बनाने का एकमात्र पथ यही है। भारतीय समाज को अपनी सनातन पहचान के आधार पर दोषरहित व संगठित होना ही पड़ेगा। निःशंक, निर्भय होकर सब प्रकार के भेदों को समाप्त करनेवाले व मनुष्य मात्र को वास्तविक स्वतंत्रता देकर उसमें मानवता व बंधुभाव भरनेवाले धर्ममूल्यों के अमृत से सिंचित अपने व्यक्तिगत तथा सामूहिक आचरण से मानव समाज को सुख शांति व मुक्ति देनी होगी। यही उपाय है, यही करना है–

हिन्दू हिन्दू एक रहें
भेदभाव को नहीं सहे
संघर्षों से दुःखी जगत को
मानवता की शिक्षा दें।।

"भारत माता की जय"